वर्ष : 2, अंक : 7, अक्टूबर-दिसम्बर, 2012

पारस-परस

हिन्दी काव्य की समस्त विधाओं की प्रतिनिधि एवं संग्रहणीय अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिकी

माँ विशेषांक

श्रद्धांजलि

स्वर्गीय माताजी की द्वितीय पुण्य तिथि
(8 अक्टूबर)
पर उन्हें शत्—शत् नमन्

माँ ममता का सागर है तू
माँ करुणा का आगर है तू
नित पल छलके प्रतिपल ढरके
अमृतमयी वह गागर है तू
दया, प्रेम, अनुराग तुम्ही से
तुम सा नहीं है कोई नेक
माँ, हैं तेरे रूप अनेक

डा॰ अनिल कुमार पाठक

वर्ष : 2, अंक : 7, अक्टूबर–दिसम्बर, 2012

रजि. नं. यूपी एचआईएन/2011/39939

पारस-परस

माँ विशेषांक

हिन्दी काव्य की समस्त विधाओं की प्रतिनिधि एवं संग्रहणीय अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिकी

अनुक्रमणिका

संपादकीय		02
पाठकों की पाती		03
श्रद्धा–सुमन		
मेरे प्यारे बाबू जी	डा0 अनिल कुमार पाठक	04
माँ विशेषांक		
माँ तेरे दर्शन से	पं॰ पारसनाथ पाठक 'प्रसून'	05
माँ	डॉ॰ निरूपमा शर्मा	06
नजारों के दिन/माँ का कर्ज	डॉ॰ प्रेमलता नीलम	07
है न कोई उपमा....	प्रतिमा बाजपेयी	08
तुम माँ हो मेरी	रविकान्त शाक्या 'कान्त'	09
मेरी माँ	डॉ॰ विजय कुमारी शाही	10
माँ कभी नहीं थकती	अंजू शर्मा	11
माँ की सीख	आशा सिन्हा कपूर	12
ओ प्यारी माँ	गीता नायक	13
जब माँ उदास होती है	दविन्दर कौर होरा	14
अनमोल है माँ	प्रीति बजाज	15
मेरी माँ, प्यारी माँ	मीरा सक्सेना	16
माँ का आँचल	विनीता मोटलानी	17
माँ का गम	आनन्द तिवारी 'आनन्द'	18
हाथों में पतवार दे माँ	अरूण कुमार पाठक	19–20
माँ है तेरे रूप अनेक	डॉ॰ अनिल कुमार पाठक	21
एक मृतात्मा की वसीयत	लक्ष्मीकांत वर्मा	22–23
महाशक्ति	इंदीवर	24
तुम माँ मेरी, तुम सबकी माँ	मीनाक्षी दास	25
तुम्ही मिटाओ मेरी उलझन	शास्त्री नित्य गोपाल कटारे	26
पिछले साठ बरसों से	केदार नाथ सिंह	27
बेसन की सोंधी रोटी	निदा फाजली	28
माँ की याद दिलाती है	मंजुरानी सिंह	29
माँ की याद	सर्वेश्वर दयाल सक्सेना	30
माँ, तुम्हारी याद	विष्णु विराट	31
माँ हमारी सदा नीरा	कुमार रवीन्द्र	32
मेरा आदर्श	अभिनव शुक्ल	33
वो हाथ !	डॉ॰ अब्दुल्लाह	34
माँ का प्यार नहीं है	डॉ॰ कमलेश द्विवेदी	35
स्नेह पूर्ण स्पर्श	शीला मिश्रा	36
माँ, गंगा की निर्मल धारा सी	दीपा जोशी	37
अनाथ की माँ	शिवकुमार बिलग्रामी	38
मंदिर के सब जीने....	तहसीन मुनव्वर	39
माँ की मोहब्बत	इमरान प्रतापगढ़ी	40
माँ कभी खतम नहीं होती	रंजना (रंजू) भाटिया	41
माँ : एक दास्ताँ	डॉ॰ सुनील जोगी	42–44
माँ बिन सृष्टि कहाँ चलती है	इंदुमती मिश्रा 'किरण	45
माँ है बच्चों की जान	रीटा भल्ला	46
माँ	पं॰ ओम व्यास 'ओम'	47–48

संरक्षक मंडल
डॉ. एल.पी. पाण्डेय;
अभिमन्यु कुमार पाठक;
अरुण कुमार पाठक;
राजेश प्रकाश;
डॉ. अशोक मधुप

प्रधान संपादक
डा॰ सुनील जोगी

संपादक
शिवकुमार बिलग्रामी

संपादकीय कार्यालय
418, मीडिया टाइम्स अपार्टमेंट
अभयखण्ड–चार, इंदिरापुरम
गाजियाबाद – 201012
मो. : 08826365221

लेआउट एवं टाइपसेटिंगः
आप्शन प्रिन्टोफास्ट,
पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एरिया नई दिल्ली – 92

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक एवं प्रकाशक द्वारा **प्रसून प्रतिष्ठान** के लिए **डॉ. अनिल कुमार पाठक** द्वारा **आप्शन प्रिन्टोफास्ट पटपड़गंज इन्ड. एरिया नई दिल्ली तथा 257, गोलागंज, लखनऊ** से मुद्रित एवं सी–49, बटलर पैलेस कॉलोनी, जॉपलिंग रोड़, लखनऊ से प्रकाशित ।

पारस–परस में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार संबंधित रचनाकारों के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का रचनाओं में व्यक्त विचारों से सहमत होना आवश्यक नहीं है । पत्रिका से संबंधित सभी विवाद लखनऊ न्यायालय के अधीन होंगे। उपरोक्त सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।

संपादकीय

पं॰ ओम व्यास 'ओम' की 'माँ' पर लिखी गई एक कविता का आरम्भ इन पंक्तियों से होता है–

"माँ संवेदना है, भावना है, एहसास है
जीवन के फूलों में खुश्बू का वास है"

मित्रों! ये पंक्तियां बहुत कुछ अभिव्यंजित करती है। आज के घोर उपयोगितावाद के युग में जब संबंधों का संजाल सीमित होता जा रहा है या यों कहें कि समाप्त होता जा रहा है, उस दौरे में भी 'माँ' येन–केन–प्रकारेण संबंधों का केन्द्र बिन्दु बनी हुई है, और अचरज इस बात का है कि वह संबंधों के केन्द्र में सिर्फ अपनी उपयोगिता के कारण नही है, अपितु अभी भी माँ भावना के स्तर पर प्रबल उपस्थिति दर्ज कराये हैं। वर्तमान में, विश्व के किसी देश में, कहीं पर भी, कोई ऐसा संबंध नही है जो 'शब्द उच्चारण' मात्र से एक 'भावोन्मेष' पैदा करता हो। न पुत्र, न पुत्री, न पिता, न भाई, न बहन। किसी के उच्चारण से हमारे अंदर वैसा 'भावस्राव' नहीं होता, जो 'माँ' के उच्चारण से होता है। अस्तु, माँ अभी भी भावना के स्तर पर प्रबल–प्रगाढ संबंधों का पुँज हैं।

'भावना' दो रूपों में व्यक्त है– सद्भावना और दुर्भावना। 'माँ' का भाव हमारे हृदय में सद्भाव लाता है, दुर्भाव नहीं। अनुभवसिद्ध, महाकवि गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा है–

"जनक सुता जग जननि जानकी
अतिसय प्रिय करूना निधान की
ताके जुग पद कमल मनावऊँ
जासु कृपा निर्मल मति पावऊँ"

'माँ' निर्मल बुद्धि प्रदान करने वाली है। निर्मल बुद्धि का उत्स 'सद्भाव' से है। सद्भाव का उत्स् माँ शब्द के उच्चारण से है, उसके स्मरण मात्र से है।

मित्रो, जिस माँ के उच्चारण और स्मरण मात्र से 'सद्भाव' पैदा हो, 'सद्भाव' से निर्मल बुद्धि आये, निर्मल बुद्धि हमें सदाचार के लिए प्ररित करे, हमारे सदाचरण से जगत के प्राणियों के बीच समरसता हो, इसी मन्तव्य को ध्यान में रखते हुए, इस अंक में 'माँ' पर हिन्दी में लिखी गई सर्वश्रेष्ठ कविताओं का चयन किया गया है। अपने पाठकों तक माँ पर लिखी गई अधिक से अधिक कविताएं पहुंचाने के इस प्रयास में, इस अंक में हमें पृष्ठों की संख्या बढ़ानी पड़ी है, और इस बार यह अंक पचास से अधिक पृष्ठों का है। यह इसलिए कि 'माँ' पर लिखी गई किसी अच्छी कविता से हमारे सुधी पाठकों को वंचित न होना पड़े।

विगत में 'माँ' पर निकाले गये विशेषांक की भांति इस बार भी हम पत्रिका के आमुख के पृष्ठ भाग पर इस पत्रिका की प्रणेता पूज्य माता जी (धर्मपत्नी स्वर्गीय पारसनाथ पाठक 'प्रसून') की द्वितीय पुण्यतिथि (8 अक्टूबर) पर हम उनका चित्र प्रकाशित कर रहें हैं और उन्हें अपनी ओर से डॉ॰ सुनील जोगी की निम्न पंक्तियों के साथ विनम्र श्रंद्धाजलि अर्पित कर रहे हैं–

"हर घर में माँ की पूजा हो
ऐसा संकल्प उठाता हूं
मैं दुनिया की हर माँ के
चरणों में यह शीश झुकाता हूं"

शिवकुमार बिलग्रामी
(संपादक)

पाठकों की पाती

महोदय,

आपने पारस–परस के स्वतंत्रता विशेषांक में जो कविताएं प्रकाशित की हैं उनमें अटल बिहारी बाजपेयी की पन्द्रह अगस्त की पुकार की ये पंक्तियां मेरे मन को छू गईं–जिनकी लाशों पर पग धर कर / आजादी भारत में आई / वे अब तक हैं खाना बदोश / गम की काली बदली छाई। इस देश के करोड़ों लोगों ने आजादी की जंग लड़ी थी लेकिन आजादी के बाद, देश में जिस तरह से नई–नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, वह अपने आप में शोचनीय है। वास्वत में हमने–जो पाया उसमें खो न जायें, जो खोया उसका ध्यान करें।

राधारमण मिश्र
नई दिल्ली

माननीय संपादक महोदय,

आपने इस अंक में बेजोड़ रचनाएं प्रकाशित की है। मैं समझ नहीं पा रहा हूं कि कौन सी एक कविता का नाम लूं जो बहुत अच्छी है। सारी ही कविताएं बहुत अच्छी हैं–दुष्यंत कुमार की–खंडहर बचे हुए हैं, अटल बिहारी वाजपेयी की–पन्द्रह अगस्त की पुकार, हरिओम पवार की – आजादी के टूटे–फूटे सपने लेकर बैठा हूं, हरिवंश राय बच्चन की – है अंधेरी रात पर दीवा जलाना कब मना है, रामाधारी सिंह दिनकर की–विजयी के सदृश जियो रे, किस किस का नाम लूं सब एक से एक बेहतरीन कविताएं हैं। बचपन में प्रभातफेरी में एक गीत गाते थे झंडा ऊँचा रहे हमारा। मुझे पता नहीं था इस गीत के रचयिता कौन हैं। इस अंक में आपने रचनाकार के नाम के साथ पूरा गीत देकर बड़ा उपकार किया। बचपन की यादें ताजा हो आईं।

ध्यानपाल सिंह सोमवंशी
हरदोई

सूचना

पारस–परस के पाठकों और योगदानकर्त्ताओं के लिए एक खुश खबरी यह है कि 'प्रसून प्रतिष्ठान प्रबंधन' ने स्वर्गीय पारसनाथ पाठक 'प्रसून' की स्मृति में एक 'प्रसून प्रोत्साहन पुरस्कार' शुरू करने का निर्णय लिया है। इस पुरस्कार की राशि 1100 रूपये नकद है। यह पुरस्कार प्रत्येक अंक में प्रकाशित किसी ऐसी उत्कृष्ट रचना को दिया जायेगा जिसमें काव्य का मर्म और धर्म समाहित हो और जो काव्य की कसौटी पर खरी उतरती है। यदि एक से अधिक रचनाएं पुरस्कृत करने योग्य पायी गयीं तो राशि को तद्नुसार विभक्त कर दिया जायेगा।

पुरस्कार के बारे में अंतिम निर्णय प्रसून प्रतिष्ठान प्रबंधन का होगा और इस बारे में प्रबंधन के निर्णय को चुनौती नहीं दी जा सकती।

रचनाकार अपनी रचनाएं कृपया निम्नलिखित पते पर भेजें–

संपादक : पारस–परस
418, मीडिया टाइम्स अपार्टमेंट
अभय खण्ड–चार, इंदिरापुरम
गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)
email : paarasparas.pathak@gmail.com

मेरे प्यारे बाबू जी

– डा0 अनिल कुमार पाठक

जीवन की ऊषा बेला में,
हुये नियति से जब अभिशप्त ।
दुख–पीड़ा को गले लगाकर,
संघर्षो से ही परितप्त ।
अदृश कृपा पा मातु–पिता की,
'बाबू जी' जैसे ऋषिसप्त ।
विकट डगर पर कभी रूके ना,
मेरे प्यारे बाबू जी ।।
सबसे न्यारे बाबू जी ।।

जीवन पथ अनजाना जिसमें
ना कोई संगी –साथी ।
एकाकी, पदगामी, संग में
कोई अश्व न हाथी ।
चहुँदिशि फैल गया अँधियारा,
ना दीया ना बाती ।
निशा काल पर कभी डरे ना,
मेरे प्यारे बाबू जी ।
सबसे न्यारे बाबू जी ।।
कोशिश होती रही सदा,
विचलित पथ से हो जायें।
त्याग कटीले बिस्तर को,
मखमली सेज पर सो जाये ।
साथ छोड़ दे सच का वे,
स्वप्न लोक में खौ जाए
मेरे प्यारे बाबू जी ।
सबसे न्यारे बाबू जी ।।
अरि संग मीत घात से आहत,
लथपथ और विदीर्ण हुए ।
पग–पग पर दी कठिन परीक्षा,
लेकिन सबसे उत्तीर्ण हुये ।
दिग्दर्शक, प्रेरक बन सबके,
रवि सम वे अवतीर्ण हुये ।
सत्पथ से कभी हटे ना,
मेरे प्यारे बाबू जी ।
सबसे न्यारे बाबू जी ।।

माँ, तेरे दर्शन से

– पं॰ पारसनाथ पाठक 'प्रसून'

माँ तेरे दर्शन से एक बार!
खिलती हैं कितनी मृदु–आशायें, खुलते हैं शत–शत मुक्ति–द्वार। माँ...!

सलिल तरंगे धोती चरणों को, मन्द समीरन पंखा झलता।
नीले नभ की छाया में है, मलयानिल ढोता सुरभि–भार। माँ...!

दूर क्षितिज के वातायन में कनक–थाल में दीप सजाये।
प्रकृति–वधू तेरे पूजन को गूँथ रही नव–हीरक हार! माँ...!

रवि अपलक आँखों से निरख रहा तेरी छवि बटोर न पाता,
शत–शत किरणों के हाथों से खींच रहा वह मृदुल प्यार। माँ...!

शान्ति उदधि की मृदु–शय्या पर शोभित तेरा यह उच्च भाल।
तेरी यह मूर्ति विजय की प्रतिमा तेरा यह द्वार अभय का द्वार। माँ...!

काव्य–कला तुझसे मिलती है, अमर–विभूति तुम्हारी है,
सागर निज लोल तरंगों से करता तेरे यश की पुकार। माँ...!

यह रूप तुम्हारा कितना सुन्दर, स्नेह भरा कितना पावन,
माँ तेरे चरणों के नीचे तक, क्या पहुँच सकूँगा एक बार। माँ...!
माँ तेरे दर्शन से एक बार।

* * *

माँ

—डॉ. निरूपमा शर्मा

माँ तो केवल बस माँ ही है, उसका कोई रूप अरूप नहीं,
परिभाषित करने की क्षमता मुझ में क्या ईश्वर में भी नहीं।।

अस्तित्व मेरा यह रूप मेरा मेरे जीवन का यह सोपान,
है तेरे ही रूप विचारों का प्रतिबिंब मेरा जीवन वरदान।

कंकरीले पथ संघर्षों में चलने का जब संकल्प लिया,
झंझा आई बिजुरी कांपी तूफाँ में तरणी पार किया।

मुझको जीवन देने के हित है किया तिरोहित सब सुख को,
कुछ पाया कभी नहीं तुमने, बस देख सुखी होती मुख को।

मेरे शोणित का बूँद–बूँद है ऋणी रहेगा, हूँ जब तक,
मिल भी जाऊँ इस पंचतत्व इतिहास रहे स्वर्णिम तब तक।

रेखाओं के आड़े तिरछे, चित्रों के बीच उकेरा मुझे,
अपने को शून्य बना करके तम में भी दिया सबेरा मुझे।

खुद रही निरक्षर, होकर भी अक्षर का ब्रह्म दिया मुझको,
मेरा अणु–अणु मिट करके भी, ना विस्मृत करे, उऋण तुमको।

इस अक्षरदीप से तुमको माँ उजास समर्पित करती हूँ,
मुझमें क्या इतनी क्षमता है, सशरीर उऋण हो सकती हूँ।

* * *

नज़ारों के दिन / माँ का कर्ज

—डॉ. प्रेमलता नीलम

फिर फुहारों के दिन आ गये
फिर नज़ारों के दिन आ गये

नसव में पाल बँधने लगे
फिर किनारों के दिन आ गये

मोर के आये घनश्याम फिर
फिर दो यारों के दिन आ गये

दुल्हनों की चली डोलियाँ
फिर कहारों के दिन आ गये

झम झमाझम झड़ी पर झड़ी,
फिर कहारों के दिन आ गये

राह फिसलन भरी जल मगन
फिर सवारों के दिन आ गये

नील नयन 'नीलम' निरखते रहे
फिर बटमारों के दिन आ गये।

बदला है परिवेश हवा का रुख बदला,
अब तो बदलो पानी, मछलीदान का,
अविश्वास की दृढ़ पथरीली भूमि पर,
तुम्हें सजाना है, नव पथ निर्माण का।
चतुर शिकारी जाल बहुत फैला रहे,
व्याकुल पंछी, बाज बहुत मँडरा रहे,
करो नियंत्रण, फँसो न कण के लोभ में,
करना न विश्वास किसी अनजान का।

तुमने मिलकर कठिन बेड़ियाँ तोड़ीं थी,
शूल गहे, फूलों की गलियाँ छोड़ी थी,
तार—तार काँटों से दामन था हुआ,
तब स्वतंत्रता का पाया वरदान था।

वही तुम्हारी शक्ति संगठन, साधना
अब न किसी कीमत पर धरती बाँटना,
धर्म—जाति—मजहब, बस भारत एक है,
कर्ज चुकाना है माँ के बलिदान का।

* * *

यूँ चुप रहना ठीक नहीं है कोई मीठी बात करो
मोर, चकोर, पपीहा, कोयल सबको मात करो
कतील शिफाई

है न कोई उपमा

–प्रतिमा बाजपेयी

है न कोई उपमा जो माँ तुल्य समता कर सके।
वेद, शास्त्र, पुराण भी माँ की उपमा न कर सके।।
ज्ञान की गंगा है माँ, गुरु विश्व की रचनामयी।
प्रेम की मूरत है माँ, करुणामयी – ममतामयी।।
जन्म के पहले से माँ तू अब तलक है सम्हालती।
दुख न कोई आने पाए, ढाल बन कर पालती।।
प्रसव की पीड़ा सही, शिशु को सम्हाला प्यार से।
काम सारा कर थकी, झिड़की सही परिवार से।।
चेहरे में मुसकान हर दम, ख्याल सबका माँ रखे।
है न कोई उपमा.....

पितृ गृह को छोड़ कर, आई है बन वो भामिनी।
सुंदरी है विश्व की, नजरें चुराए कामिनी।।
शांत सागर–सी है माँ, वो सद्‌गुणों की आगरी।
प्रेम में पति को समर्पित, पगली है वो बावरी।।
क्या किया विधि ने, जो माँ इतनी चतुर गुणवान है।
बाकी नर सब जीव हैं, पर माँ तू ब्रह्म समान है।।
ब्रह्म से भी तू परे माँ, आदि शक्ति जगदंबिके।
धर्म रक्षा हेतु तू, असुर मर्दनि चंडिके।।
है न कोई उपमा .....

मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे, गिरिजाघर जाएँ।
तेरे बिन सच्ची शांति, कहीं माँ न पाएँ।।
वो बेटा बड़ा गरीब, जिसे माँ छोड़ गई।
उसकी फूटी तकदीर, जिसे माँ छोड़ गई।।
सुख–संपत्ति, धन–वैभव माँ सब तुझ में है।
माँ रहना सब के साथ, चाह यह मुझ में है।।
वो घर, मंदिर सा पवित्र, जहाँ माँ चरण धरे।
है न कोई उपमा कि जो माँ तुल्य समता कर सके।।

* * *

तुम माँ हो मेरी

–रविकान्त शाक्या 'कान्त'

तुम्हारे लिये
क्या लिखूँ?
जो भी लिखूँ
कम है
कुछ भी कर ना सका
द्वन्द्व है मन में
क्या कभी करना भी चाहा?
दिल से
शायद सोचता हूँ
तुम माँ हो मेरी
चलेगा
कुछ न करने से भी
पर क्या ये सच है?
कितना खुश होती है माँ
बेटों का माँ के लिये
कुछ करने से
पर आड़े आता है स्वार्थ
बेटों का
भूल जाते हैं उसको
अपनी खुशी की खातिर
भूल जाते हैं उसकी बातें
कि माँ का बेटों को
सूखे में सुलाकर
खुद गीले में लेटना
खुद भूखे रहकर
बेटे के मुँह में
अपने हाथों से
डाले निवाले भी
याद नहीं रहते
उंगली पकड़कर
चलना सिखाना
कड़ी धूप में
नंगे सिर रहकर
बेटे के सर
आँचल की छाया डालना
उफ्
माँ
तुम भी बेटों–सी
निष्ठुर क्यों नहीं होती
जिन्हें याद रहते हैं
सिर्फ अपने स्वार्थ
अपनी तरक्की की बातें
गाड़ी, बंगला सैरगाहों
की रातें
तुम तो अपने दामन में
कई बेटों को समा लेती हो
पर हम कई दामन भी
माँ को छाया नहीं
दे पाते
क्यों स्वार्थ है हम में?
बचपन में हमारा दिल बहलाने
को तोतली बोलियाँ बोलती है
और हम बड़े होने पर भी
तुमसे दो बोल बोलना
नहीं चाहते
काश! हम फिर से
छोटे हो जायें माँ
तुम्हारे आँचल में
समा जायें माँ!

* * *

मेरी माँ

—डॉ. विजय कुमार शाही

मेरी माँ शीत की तपती धूप है
ठिठुरते ही मुझे आँचल की
गरम छाँव में लेकर
पूरे शरीर को भर देती है
ममता की तपन से।

मेरी माँ टटके बथुए का साग है
घर में नहीं है कुछ भी
खाने के लिए
भूख से बिलबिला रहा हूँ मैं
भूखी है कई दिनों से माँ
अपनी भूख को दबाए
अंतस के दाब से
गोद में लेकर पकाई हुई
बथुए के साग को
धीरे से डालती है
कौर बनाकर सूखे ओंठों में
चुप हो जाता हूँ मैं
माँ भी चुप
पर उसकी नम आँखें
कह रही हैं अभी भी
बहुत कुछ।

मेरी माँ, मेरी खिलखिलाती
हँसी है, मैं रोता हूँ
रो देती है माँ
हँसाने के लिए मुझे
करती है कई स्वांग।
कई अनजाने, अनसुने
गीतों को, कई धुनों
में पिरोकर लगती है
सुनाने।
मुझे हँसाने के लिए
खुद हँस पड़ती है माँ
दिल में छिपाए दर्द
के पहाड़ को।
नहीं हँसता हूँ मैं
रोने लगती है माँ
अपनी बेबसी पर
घंटों पुचकारने के बाद,
हँस पड़ता हूँ मैं
हँस पड़ती हैं
माँ की थकी
बूढ़ी आँखें।

* * *

धन के हाथों बिके हैं सब कानून
अब किसी जुर्म की सज़ा ही नहीं
कृष्ण बिहारी 'नूर'

माँ कभी नहीं थकती

—अंजू शर्मा

माँ कभी नहीं थकती
बाबा की अदरक – नींबू की चाय
दादी माँ की दवाइयाँ
भाभी का लंच बॉक्स व
बिट्टी का दूध भरती
माँ कभी नहीं थकती।
नंगे बदन घूमते
महरी के बच्चों को झिड़कती
पड़ोसन चाची का
कुशल–क्षेम पूछती
आत्मा राम को
दूध–भात देती
माँ कभी नहीं थकती।

बैठक से लेकर
चौके तक सारा दिन
चक्कर घिन्नी की
तरह दौड़ती–भागती
माँ कभी नहीं थकती
परन्तु दीदी का फोटो
बन्द लिफाफे में
जब लौटकर आ जाता है तो
माँ निराश हो जाती है बहुत।

* * *

माँ की सीख

—आशा सिन्हा कपूर

माँ तेरे पवित्र आंचल की, छांव में पाया अद्‌भुत प्यार
सीख दी जो तुमने बनी, जीवन का अनमोल उपहार।

संयम—नियम सिखाया तुमने
हिम्मत—श्रम का पाठ पढ़ाया।

जोड़ा जीवन को कर्मभूमि से
नफ़रत का सब कलुष मिटाया।

हार न मानने वालों के सपने होते हैं साकार
सीख दी जो तुमने बनी, जीवन का अनमोल उपहार।

तेरे पथ में जो आएं काँटे,
उनको चुन झोली में रखना।

जो भी मिले प्रसून राह में,
उनको बढ़ झोली में रखना।

ईश्वर देगा तुमको चैतन्य शांति भरा आगार
सीख दी जो तुमने बनी, जीवन का अनमोल उपहार।

मन में ललक रहे बढ़ने की
होठों पर मुस्कान रहे।

कुंठित जीवन में भी पल—पल
बढ़ने का अरमान रहे।

पारस बन कर जीना सीखो, स्वर्णिम पाओगे संसार
सीख दी जो तुमने बनी, जीवन का अनमोल उपहार।

* * *

ओ प्यारी माँ

—गीता नायक

अपने देश की अपने वतन की याद सताती है,
ओ प्यारी माँ मुझको तेरी याद आती है।
माँ से बढ़कर कोई नहीं है इस दुनिया में दूजा,
कुछ पाना है जीवन में तो माँ की कर लो पूजा।
कितनी पावन, कितनी निर्मल, कितनी सच्ची है तू,
मन से भोली, तन की कोमल, कितनी अच्छी है तू।
दूर रहकर भी कितना रुलाती है। ओ प्यारी माँ.....

याद आता है जब मुझको वो बचपन अपना,
लगता है जैसे कल का हो कोई सपना।
मुझको रोता देखकर कितना रोती थी तू,
मुझे सुलाने की खातिर नहीं सोती थी तू।
कितना कष्ट उठाया तूने मुझे पालने में,
तुझसे बढ़कर कोई नहीं है इस जमाने में।
त्याग और करुणा की देवी तू कहलाती है। ओ प्यारी माँ.....

अपने लूह से सींच के तूने बीज को पौधा बनाया,
जीवन में हर मुश्किल से तूने लड़ना सिखाया।
हृदय अथाह प्यार का सागर, गोद तुम्हारी ममतामयी,
कितनी मुश्किल भी आये, कभी नहीं तू घबरायी।
जब भी तुझको याद कर आँख मेरी भर आती है।
ओ प्यारी माँ मुझको तेरी याद आती है।

* * *

जब माँ उदास होती है

—दविन्दर कौर होरा

जब माँ उदास होती है,
तो चूल्हा भी उदास हो जाता है
टपरे पर पड़े पानी की बूँदों सा,
घर का कोना–कोना थर्राता है
खाने का स्वाद कसैला लगता है,
चाँद भी किसी मासूम सा सहम जाता है
लकड़ियाँ टहकती हैं बिन धुँए के,
और चेहरा माँ का धुँधला नजर आता है
चिड़िया भी नहीं चहकती उस दिन,
आम रस–हीन हो जाता है
जब माँ उदास होती है।
सावन श्रृंगारविहीन हो जाता है
हवा नहीं देती संतोष तन को,
पानी भी तेजाब हो जाता है
बोझिल–बोझिल ऊँघते बर्तन,
घर पतवारहीन नाव सा हो जाता है
कहकहे नहीं गूँजते घर में,
घर अट्टहासविहीन हो जाता है
खिली धूप में आती है झुरझुरी,
हर सूँ एक मौन सा छा जाता है
जब माँ उदास होती है।
तो प्रकृति का रुख ही बदल जाता है
माँ की पाजेब की
रूनझुन सुस्त हो जाती है
सरस्वती का गान थम जाता है
जब माँ उदास होती है,
तो मानो जीवन ही रूठ जाता है।

* * *

अनमोल है माँ

—प्रीति बजाज

नारी के रूप में धरती पर साक्षात ईश्वर है माँ
माँ से बढ़कर कोई रिश्ता नहीं संसार में
माँ की कीमत उनसे पूछो जिसके पास नहीं है माँ
उम्र भर प्यार का खजाना लुटाती हैं माँ
बच्चों की फ्रिक में आधी, कच्ची नींद सोती है माँ
हर पल बच्चों की जरूरत पूरी करने को तत्पर रहती है माँ
हर दुःख से बच्चों को महफूज रखती है माँ
ममता का सागर होती है माँ
हर प्रश्न, हर दुआ को भगवान से मांग लाती है माँ
घर—आँगन को हर वक्त महकाती है माँ
दुनिया भर की खुशियाँ तेरे कदमों में हैं माँ
भोर की पहली किरण जैसी माँ
प्यार का बादल बन बरस जाती है माँ
सर्दियों के मौसम में बाहों की गर्मी से राहत पहुँचाती है माँ
तपती गर्मी में ठंडे आँचल में छुपाती है माँ
अविरल बहता हुआ स्नेह का झरना है माँ
समुद्र मंथन से निकला हुआ अमृत है माँ
तपते मरू में शीतल पोखर है माँ
हिमगिरि कैलाश की ऊँचाई है माँ
फूलों की खुशबू सी महकती माँ
दुनिया के हर रिश्ते से ज्यादा अनमोल है माँ!

* * *

मेरी माँ, प्यारी माँ

—मीरा सक्सेना

मेरी माँ प्यारी माँ तुम हो
धरा सी धैर्य वाली हो
मधुर ममतामयी तुम हो
दयामयी प्राणदायी हो।

दफन किलकारियाँ मेरी
किया अपराध क्या मैंने
लिये जन हाथ में सूजे
सिसकते स्वर यही गूँजे,
मैं नन्हीं जान बख्शो अब
अभी कलिका अविकसित हूँ
करूँगी नाम मैं रौशन।।

माँ! जो तुम बोलो वही बोलूँ
जो तुम खाओ वही खाऊँ
तुम्हारे रक्त ने रचकर
मेरा निर्माण कर डाला
हुयी विकसित उदर में, मैं
तुम्हारे प्यार ने पाला।

मैं सपना हूँ उस आगत का
करे निर्माण सृष्टि का
मैं देहरी की वो ज्योति हूँ
जो रौशन कर दे, दो कुल को
न बुझने दो सँभालो तुम
मेरा अस्तित्व सँवारो तुम।।

* * *

माँ का आँचल

—विनीता मोटलानी

जब ईश्वर ने अपनी रचना में
कोई भेद न अपनाया
फिर जननी होकर मुझे जन्म ना देकर
तुमने यह दुख क्यों है पाया

माँ के आँचल में तो
जगत का ममत्व समाया
फिर मेरे लिए ही कम क्यूँ पड़ा
तुम्हारे आँचल का साया
जब ईश्वर ने अपनी रचना में....

क्या पुत्र मोह की चाह में
तुमने यह कदम उठाया
या सामाजिक रुढ़ियों का
तोड़ने का साहस न आया
जब ईश्वर ने अपनी रचना में.....

मिट जाएगा अनुपात
अगर तुमने साहस दिखलाया
मुझे जहाँ में लाकर समझो
निश्चय ही तुमने पुण्य कमाया
जब ईश्वर ने अपनी रचना में .....

* * *

माँ का ग़म

– आनन्द तिवारी 'आनन्द'

मेरी माँ छोड़ के मुझको गयी है स्वर्ग का रास्ता।
मेरी माँ का वो कोमल दिल सभी बच्चों में है बसता।।
मेरी रचना मेरी कविता सुनेगा कौन अब मन से।
मैं सोचूँ करूँ मैं क्या, कोई रास्ता नहीं दिखता।।
मेरी माँ छोड़ के .....

सभी को माँ की ममता की बड़ी पहचान होती है।
सभी ग़म दूर रहते हैं खड़ी जब पास माँ होती है।।
मेरी करुणा मेरा क्रन्दन सुनेगा कौन अब हम से।
मैं बच्चा था जवां भी था बुढ़ापा है सामने दिखता।।
मेरी माँ छोड़ के .....

बड़े वो भाग्यशाली हैं जिनकी माँ हैं अभी जिन्दा।
अभागा मैं अभागा वो जिसकी माँ है नहीं जिन्दा।।
मेरी गलती मेरी विनती सुनेगा कौन अब मन से।
वो जीता है मैं हारा हूँ ले गया चोर सा लगता।
मेरी माँ छोड़ के .....

* * *

गुजरते वक्त के पन्ने पलट कर के बहुत रोई
अकेली थी बहुत खुद में सिमट कर के बहुत रोई
बहुत छोटा था जब लाया कमाकर चार पैसे
मेरी माँ उस घड़ी मुझसे लिपट कर के बहुत रोइ

दिनेश रघुवंशी

हाथों में पतवार दे माँ

– अरुण कुमार पाठक

माँ मृत्युन्जय तेरा दर्शन, अविनाशी है, अविनाशी है,
तू सहज भाव ममता की है, मन तेरा सदा हुलासी है।
भगवत चरणों से विरत हुआ, तेरी गोदी में आया था,
पुचकारा तूने सदा मुझे, तेरी ममता का साया था।
जीवन जीने का अमृत पान, पहले–पहले जो मिला मुझे,
वह स्नेहमयी ममता का क्षण, फिर कहीं न जाने वाला था।
स्पर्शों का प्रतिक्षण मुझको एहसास दिलाने वाला था,
रेंगते हुए धरती से मुझको, सतत् उठाने वाला था।
प्रतिपल साँसों में बसी हुई, तू अन्तरंग में धुली हुई,
खुद गीले में सो–सोकर तू, सूखे में मुझे सुलाती थी।
तू रोती थी, चिल्लाती थी, पर प्यार से गले लगाती थी,
जब तनिक चोट लगती मुझको, तू दौड़ी–दौड़ी आती थी।
गोदी में मुझे उठाती थी, सहलाती थी, फुसलाती थी,
ममतामय आँचल रखकर तू, छाती से दूध पिलाती थी।
तू बोल तोतली खुद मन से मेरे मन में रम जाती थी।
भावों को मेरे समझ–समझ इठलाती थी, बतलाती थी।
भर संकेतों की भाषा मुझमें, भाषा ज्ञान कराती थी।
थी सदा खड़ी प्रहरी सी तू मुझे कहीं छोड़ न जाती थी।
ममता का इतना भाव भरा कि प्रथम शब्द माँ ही आया,
माँ से मामा के रूप सभी, माँ से ही मान माया पाया।
धरती पर रेंग रही काया को, क्या–क्या तूने बतलाया,
गिर–गिर उठते बालक को, माँ चलना तूने सिखलाया।
हर दर्द मेरे जीवन का, एहसास तेरे मन में पाया,
जब–जब खतरे का पल आया, माँ, तुझको वहाँ खड़ा पाया।
तू दर्द गरल पी जाती थी, पर पास मेरे मुस्काती थी
मुझको सदा हंसाने को, तू अपने दर्द छुपाती थी।
सहलाती थी, बहलाती थी, खुद भूखे रहकर तू मुझको दूध पिलाती थी,
खुद जाग–जाग कर सकल रात गोदी में मुझे सुलाती थी।

....जारी

.....जारी

चन्दामामा, राजा–रानी, परियों की कथा सुनाती थी
जड़–चेतन का कर भेद तुम्हीं गुरुता का पाठ पढ़ाती थी।
गुरु के चरणों में प्रथम समर्पण भाव तुम्हीं ने सिखलाया,
सम्बन्धों के वटवृक्षों के हर परत का बोध कराया था।
जीवन जीने की हर शैली का संस्कृत राग सुनाया था
पितुरपि गरीयसी माता गुरूगण ने मुझे बताया था।
स्नेहिल छाया, आशीषों से, झंझावाती भवसागर में
जीवन के हर तार जोड़ तुमसे, धीरे–धीरे मैं बड़ा हुआ।
जैसे–जैसे मैं बड़ा हुआ अपने पैरों पर खड़ा हुआ
मैं भूल गया तेरी छाया, खुद चुन चंचल तन माया।
धन–धान्य कमाया सकल, धरा से अम्बर तक मशहूर हुआ
मैं भाग–भाग कर चूर हुआ, अपनापन मुझसे दूर हुआ।
मेरे सपनों में मुस्काती माँ, जगते क्यों दूर चली जाती
मै सकल जगत में ढूंढ रहा, पर माँ क्यों तू न मिल पाती।
भगवत चरणों से विरत हुआ तो तेरा सहारा मिल पाया
इस भ्रममय भवसागर को पार किया
हरे ब्यथा निवारण के मंत्रों का तूने ही अधिकार दिया।
पर हुई कौन गलती मुझसे, जो तूने मुझको छोड़ दिया
सबसे अज़ीज मन–तन, उपवन से मुँह अपना कैसे मोड़ लिया।
मेरे सपनो को बुनते–बुनते मन आंगन अपना छोड़ दिया
मैं जाऊँ कहाँ? बताओ माँ! तू राह दिखाने वाली हो
उपवन तेरे यह बिखर रहा, तू इस उपवन की माली हो।
तू मौन रही, तू न आयी, तो मन रोता रह जायेगा
जग के गौरव, वैभव से बोझिल मन कैसे मुस्कायेगा।
सपनों के एहसासों को जीवन में ला, आ जा माँ!
वरना तेरी राह पकड़कर अरूण रश्मि को साथ जकड़कर
पास तेरे आकर बालक तेरा दुखड़ा सकल सुनाएगा
तेरे आशीषों स्पर्शों बिन बालक तेरा लुट जायेगा।
निर्झर ममतामय आशीषों से मुझको अब तो तार दे माँ
इस भवसागर से तरने को हाथों में पतवार दे माँ।

* * *

माँ हैं तेरे रूप अनेक

—डॉ0 अनिल कुमार पाठक

माँ ममता का सागर है तू
माँ करुणा का आगर है तू
नित पल छलके प्रतिपल ढरके
अमृतमयी वह गागर है तू
दया, प्रेम, अनुराग तुम्हीं से
तुम सा नहीं है कोई नेक।
माँ, हैं तेरे रूप अनेक।।

समता का पर्याय तुम्हीं हो
वंचित, पीड़ित का न्याय तुम्हीं हो
आंचल तेरा नभ से विस्तृत
आत्म तुम्ही माँ, काय तुम्हीं हो
समदर्शी, निर्मल निश्छल तुम
इस सृष्टि की तू ही टेक।
माँ, हैं तेरे रूप अनेक।।

अतुलनीय, अद्वितीय, अगोचर
तू ही तो माँ अमर धरा पर
कलुष–तमस से दूर ज्योतिमय
तू विजयी है मरण जरा पर
पुत्र कुपुत्र हुआ पर माता
ममतामय नित तू ही एक।
मां हैं तेरे रूप अनेक।।

* * *

एक मृतात्मा की वसीयत

—लक्ष्मीकांत वर्मा

ओ माँ!
यह सब तुम्हारे स्नेह के आधार पर जीते हैं
कड़ुआअट, तल्खी, तीखी सारी बेबसियाँ।
महज इस खाल में भूसा भर कर
आँखों में कौडियाँ लगा
कानों में सीपियाँ लगा
केवल इसीलिए, मुझे तुम्हारे पास खड़ा करते हैं
ताकि तुम सड़ी, सूखी, प्राणहीन खलरी चाटो
अपना अमित स्नेह ले
अपने बेबस आँखों से मुझे ताको
और भर दो
इन सारे के सारे स्नेह के पिपासे मुरदों के स्नेह–पात्र
इसलिये कि तुम माता हो
शुचि स्नेहयुक्त स्निग्ध पयमयी, रसपूर्ण वात्सल्य की प्रतिमा हो
ओ माँ–
यह सब तुम्हारे स्नेह पर जी लेंगे
क्योंकि ये महज जीते हैं
ये रहते नहीं!
भर दो
इस त्वचा की मृतात्मा की सूखी ठाठर में
वह घास–पात, कूडा–कबाड़ सब कुछ भर दो
लगा दो इन नकली कौडियों की आँखें
मेरे माथे के नीचे के गोलकों में लगा दो

....जारी

....जारी

कानों में सीपियाँ
खपाचियाँ पैरों में
तारकोल, नेप्थलीन की गोलियाँ भर दो
मेरे इस हृदयहीन, धमनीहीन, स्नायुहीन काया में

सभी कुछ भर दो
ताकि मैं रस–स्निग्ध पयमयी माता के निकट
अपनी चेतनाहीन पूँछ को एक स्थिति में उठा
उसके वात्सल्य को, हृदय को, आकर्षण को, चेतना को
सबको उभार दूँ
और तुम इस मुरदे के उपजाये स्नेह को निचोड़
जीवित रहो!
ओ माँ!
सच मानो, मुझे दीमक नहीं छुयेंगे
नहीं पास आयेगी चींटी, चूहा–
नहीं कुतरेगा, बहेलिये का कुत्ता मुझे
नहीं देखेगा कोई भी हिंसक
क्योंकि मैं मरकर जीवित का अभिनय हूँ
केवल एक स्थिति हूँ
जिस पर रचना की देहली माथा टेक
हार मान सो जाती है
इसलिए दो
ओ पयमयी, रस–स्निग्ध ज्वारों को स्रोत
इन सबको दे मेरा वह स्नेह।

* * *

महाशक्ति

—इंदीवर

मीत भले बैरी बन जायें, न मुझको कोई प्यार मिले।
हर ग़म में जी सकता हूँ माँ, तेरा अगर दुलार मिले।।

तेरा अगर दुलार मिले तो, हर ग़म में जी सकता हूँ,
मैं शंकर की तरह ज़हर का, हर आँसू पी सकता हूँ।
तू आंचल से आँसू पोंछे फिर ग़म क्या कर सकता है?
स्नेहमयी हो नज़र, जख्म कैसा भी हो भर सकता है।
मन को मेरे, तेरी ममताओं का यदि आधार मिले।
हर ग़म में जी सकता हूँ माँ, तेरा अगर दुलार मिले।।

पीठ ठोक दे तू मेरी, मैं मुमकिन नहीं पिछड़ जाऊँ,
दुनिया तो दुनिया ही है, मैं किस्मत से भी लड़ जाऊँ,
मुझे जहाँ की क्या परवा, मैं दो जहान भी ठुकरा दूँ,
सरपर तेरा हाथ रहे तो, आसमान भी ठुकरा दूँ,
और चाहिये क्या, यदि तेरे चरणों का संसार मिले?
हर ग़म में जी सकता हूँ माँ, तेरा अगर दुलार मिले।।

हो तेरी आशीष अगर, हर शाप मुझे वरदान बने,
पत्थर को भी छू दूँ मैं, तो पत्थर भी भगवान बने।
गीत बदल जाये गीता में, थक जाये संसार जहाँ।
क़लम वहाँ पर चले, टूटकर रह जाये तलवार जहाँ।
हर नैया को माझी, ओ' हर माझी को पतवार मिले।
हर ग़म में जी सकता हूँ माँ, तेरा अगर दुलार मिले।।

(ख्याति प्राप्त गीतकार श्री इंदीवर का जन्म झांसी जिला के बरूआसागर ग्राम में हुआ था। श्री इंदीवर ने अपनी जादुई लेखनी से ऐसे कई गीतों की रचना की है, जिन्हें हिन्दी फिल्मों की आत्मा कहा जाता है।)

* * *

तुम माँ मेरी, तुम सबकी माँ

—मीनाक्षी दास

धरती का तुझमें धैर्य समाया
विस्तार गगन का तुमने पाया
सागर सा गाम्भीर्य लिये
तुम माँ मेरी, तुम सबकी माँ

तरुवर का सा निर्लिप्त भाव
निश्छल मन तेरा निर्झर सा
हिमगिरि सा ऊँचा पुण्य तेरा
माँ, मन को शीतलता देता

ममता की यह मूरत मेरी
पीड़ा का जिसने गरल पिया
संतापों में तप, कंचन बन
हमको मन की दृढ़ता देती

तुम करुणानिधि निर्झरिणी सी
स्नेह सलिल से सिंचित करती
जीवन मग की क्यारी–क्यारी
तुम माँ जग से न्यारी प्यारी

तुमको प्रणाम, शत्–शत् प्रणाम
तुम माँ मेरी, इसकी उसकी
तुम माँ की अपूर्व छवि
तुम धन्य धन्य तुम सबकी माँ

* * *

तुम्हीं मिटाओ मेरी उलझन

–शास्त्री नित्यगोपाल कटारे

तुम्हीं मिटाओ मेरी उलझन
कैसे कह दूँ कि तुम कैसी हो
कोई नहीं सृष्टि में तुम–सा
माँ तुम बिल्कुल माँ जैसी हो।
ब्रह्मा तो केवल रचता है
तुम तो पालन भी करती हो
शिव हरते तो सब हर लेते
तुम चुन–चुन पीड़ा हरती हो
किसे सामने खड़ा करूँ मैं?
और कहूँ फिर तुम ऐसी हो
माँ तुम बिल्कुल माँ जैसी हो।।

ज्ञानी बुद्ध प्रेम बिन सूखे
सारे देव भक्ति के भूखे
लगते है तेरी तुलना में
ममता बिन सब रूखे–रूखे
पूजा करे सताए कोई
सबके लिए एक जैसी हो
माँ तुम बिल्कुल माँ जैसी हो।।

कितनी गहरी है अद्‌भुत–सी
तेरी यह करुणा की गागर
जाने क्यों छोटा लगता है
तेरे आगे करुणा–सागर
जाकी रही भावना जैसी
मूरत देखी तिन्ह जैसी हो
माँ तुम बिल्कुल माँ जैसी हो।।

मेरी लघु आकुलता से ही
कितनी व्याकुल हो जाती हो
मुझे तृप्त करने के सुख में
तुम भूखी ही सो जाती हो
सब जग बदला, मैं भी बदला
तुम तो वैसी–की–वैसी हो
माँ तुम बिल्कुल माँ जैसी हो।।

तुमसे तन–मन जीवन पाया
तुमने ही चलना सिखलाया
पर देखो मेरी कृतघ्नता
काम तुम्हारे कभी न आया
क्यों करती हो क्षमा हमेशा
तुम भी तो जाने कैसी हो!
माँ तुम बिल्कुल माँ जैसी हो।।

* * *

पिछले साठ बरसों से

—केदारनाथ सिंह

पिछले साठ बरसों से
एक सुई और तागे के बीच
दबी है माँ!

हालांकि वह खुद एक करघा है
जिस पर साठ बरस बुने गए हैं
धीरे–धीरे; तह–पर–तह
खूब मोटे गझिन और खुरदरे
साठ बरस।

जब वह बहुत ज्यादा थक जाती है
तो उठा लेती है सुई और तागा
मैंने देखा है कि सब सो जाते हैं
तो सुई चलाने वाले उसके हाथ
देर रात तक समय को धीरे–धीरे
सिलते हैं
जैसे वह मेरा फटा हुआ कुर्ता हो।

* * *

रिश्ते हैं पर ठेस लगाने वाले हैं
सारे मंज़र होश उड़ाने वाले हैं
अब क्यों माँ को भूखा सोना पड़ता है
अब तो घर में चार कमाने वाले हैं

अशोक रावत

बेसन की सोंधी रोटी

–निदा फ़ाज़ली

बेसन की सोंधी रोटी पर
खट्टी चटनी जैसी माँ
याद आती है चौका–बासन
चिमटा, फुकनी जैसी माँ।

बान की खुर्रीखाट के ऊपर
हर आहट पर कान धरे
आधी सोयी, आधी जागी
थकी दुपहरी जैसी माँ।

चिड़ियो की चहकार में गूंजे
राधा–मोहन अली–अली
मुर्गे की आवाज से खुलती
घर की कुंडी जैसी माँ।

बीवी, बेटी, बहन, पड़ोसन
थोड़ी–थोड़ी–सी सबमें
दिन भर एक रस्सी के ऊपर
चलती नटनी जैसी माँ।

बाँट के अपना चेहरा, माथा;
आँखें जाने कहाँ गई?
फटे–पुराने एक अलबम में
चंचल लड़की जैसी माँ।

* * *

माँ की याद दिलाती है

—मंजुरानी सिंह

जाड़े की जब धूप सुनहरी
अंगना में छा जाती है
बगिया की माटी में तुलसी
जब औचक उग आती है
माँ की याद दिलाती है

हो अजान या गूँज शंख की
जब मुझसे टकराती है
पाँव तले पड़ी पुस्तक की
चीख हृदय में आती है
माँ की याद दिलाती है

कटे पेड़ पर भी हरियाली
जब उगने को आती है
कटी डाल भी जब कातिल का
चूल्हा रोज़ जलाती है
माँ की याद दिलाती है

अदहन रखती कोई औरत
नन्हों से घिर जाती है
अपनी थाली देकर जब भी
उनकी भूख मिटाती है
माँ की याद दिलाती है

सुख में चाहे याद न हो, पर
चोट कोई जब आती है
सूरज के जाते ही कोई
दीपशिखा जल जाती है
माँ की याद दिलाती है।

* * *

माँ की याद

—सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

चीटियां अंडे उठाकर जा रही हैं
और चिडियां नीड़ को चारा दबाए
थान पर बछड़ा रंभाने लग गया है
टकटकी सूने विजन–पथ पर लगाए

थाम आँचल थका बालक रो उठा है
है खड़ी माँ शीश का गट्ठर गिराए
बाँह दो चुमकारती–सी बढ़ रही है
साँझ से कह दो बुझे दीपक जलाए

शोर डैनों में छिपाने के लिए अब
शोर माँ की गोद जाने के लिए अब
शोर घर–घर नींद रानी के लिए अब
शोर परियों की कहानी के लिए अब

एक मैं ही हूँ कि मेरी साँझ चुप है
एक मेरे दीप में ही बल नहीं है
एक मेरी खाट का विस्तार नभ–सा
क्योंकि मेरे शीश पर आँचल नहीं है।

* * *

अपनी ही कहता रहे सुने न दूजे तर्क
सभी तर्क हों व्यर्थ जब, मूरख करे कुतर्क
काका हाथरसी

माँ, तुम्हारी याद

—विष्णु विराट

देह में जमने लगी
बहती नदी है
साँस लेने में लगी पूरी सदी है
चेतना पर धुंध छाई है
माँ तुम्हारी याद आई है।

हम गगन में है
न धरती पर
बस हवाओं में हवाएं है
धूप की कुछ गुनगुनी किरनें
ये तुम्हारी ही दुआएँ हैं

कान जैसे सूर के पद सुन रहे हैं
किंतु मन के तार सब अवगुन
रहे हैं
गोद में सिर रख ज़रा सो लूँ
फिर जनम भर रतजगाई है
जंगलो से वह बचा लाई
एक वासंती अभय देकर
लोरियां हमको सुनाती है
फिर वही रंगीन लय लेकर
प्यार से सिर पर रखा आँचल तुम्हारा
मैं तभी से युद्ध कोई भी न हारा
झूठ ने ऐसी जलाई आँच

सच ने गर्दन झुकाई है
माँ तुम्हारी याद आई है

देख तुलसी में नई कोंपल
बोझ अब उतरा मेरे सिर से
झर रहे हैं फूल हरसिंगार
मन हरा होने लगा फिर से
द्वार पर शहनाइयाँ
बजने लगी हैं
छोरियां मेंहदी रचा सजने लगी हैं
आज बिटिया की सगाई है
माँ तुम्हारी याद आई है।

* * *

लबों पे उसके कभी बद्दुआ नहीं होती
बस एक माँ है जो मुझसे खफा नही होती
मुनव्वर राना

माँ हमारी सदानीरा

—कुमार रवीन्द्र

माँ हमारी सदानीरा नदी जैसी
महक है वह
फूल वन की
सघन मीठी छाँव जैसी
घने कोहरे में
सुनहरे रोशनी के
ठाँव जैसी
नेह का अमरित पिलाती
माँ हमारी है गंभीरा नदी जैसी

सुबह मिलती
धूप बनकर
शाम कोमल छाँव होकर
रात भर
रहती अकेली
वह अंधेरों के तटों पर
और रहती सदा हँसती
माँ हमारी महाधीरा नदी जैसी

एक मंदिर
ढाई आखर का
उसी की आरती वह
रोज नहला!
नेहजल से
हम सभी को तारती वह
हर तरफ विस्तार उसका
माँ हमारी सिंधुतीरा नदी जैसी।

* * *

मेरा आदर्श

—अभिनव शुक्ल

वह अटल है, वह सकल है,
वह अजर है, वह अमर है,
वह अगन है, वह तपन है,
वह लगन है, वह भजन है।

वह जो कहे, तो चीर डालूं,
धरा को और जल बनूँ।
वह जो कहे तो छोड़ दूँ,
संसार को, मधुकण बनूं।

इन चक्षुओं का मीत है
वह आत्मा का गीत है
वह हर पवन का राग है
वह त्याग है, वह भाग है।

वह मेरी पूजा, मै पुजारी,
वह मेरी भिक्षा, मैं भिखारी,
वह रूप है, वह धूप है
वह बोल है, वह चूप है

वह प्रेम है, वह धर्म है,
वह तत्त्व है, वह मर्म है,
वह जलज है, है जल वही,
वह रोशनी, दीपक वही।

वह आस है, विश्वास है,
वह दर्द है, परिहास है,
वह ये गगन, वह चंद्रमा,
वह ये ज़मीं, वह ज्योत्सना।

गिरजे की वह है घंटियाँ,
मंदिर की है मूरत वही।
सागर की है वह सीपियाँ,
इस ह्रदय में सूरत वही।

वह इस बदन की जान है,
माता मेरी पहचान है,
आदर्श मेरा है, मेरी माँ,
ही मेरी भगवान है।

* * *

चोटों पे चोट देते ही जाने का शुक्रिया
पत्थर को बुत की शक्ल में लाने का शुक्रिया
आँसू–सा माँ की गोद में आकर सिमट गया
नज़रों से अपनी मुझको गिराने का शुक्रिया

कुअँर बेचैन

वो हाथ!

(अम्मा के नाम)

—डॉ. अब्दुल्लाह

मरे बचपन में सर पे मेरे
एक मोहब्बत भरा हाथ था
मिसल साये के कड़ी धूप में
और अंधेरों में जो हाथ थामे मेरा
हर घड़ी साथ था
भाग जाए मेरी नींद जब ख़ौफ़ से
अपने कमरे में तन्हा मुझे डर लगे
एक आवाज़ जिस पे यकीं था मुझे
मुझसे चुपके से कहती थी
डरना नहीं
देखो मैं पास हूँ
ऐसा लहज़ा
लोरी की मानिंद आँखो में घुल जाता था
और बुद्ध को निर्वाण मिल जाता था
आज जब मैं परेशान हूँ
कितनी रातों का जागा हुआ
मेरी आँखें भी पथराई हैं
जिस्म भी दर्द से चूर है
ज़हन सोचों से माज़ूर है
दिल ज़्यादा ही रंजूर है
और वो हाथ मुझसे बहुत दूर है
मुंतज़िर हूँ कि माथे पे मेरे कोई
इक हथेली धरे
और धीमे से लहजे में मुझसे कहे
देखों मैं साथ हूँ
गोकि अब ऐसी बातों पे शायद मैं
यक़ीन ना करूँ
पर बहल जाऊँगा
और सो जाऊँगा।

* * *

माँ का प्यार नहीं है

–डॉ॰ कमलेश द्विवेदी

यहाँ सभी सुख–सुविधाएँ हैं लेकिन सुख का सार नहीं हैं।
मिला शहर में आकर सब कुछ लेकिन माँ का प्यार नहीं है।।
घर में खाएँ या होटल में,
मिल जाती है पूरी थाली।
लेकिन यहाँ नहीं मिल पाती,
रोटी माँ के हाथों वाली।
तन का सुख है पर मन वाला वो सुखमय संसार नहीं है।
मिला शहर में आकर सब कुछ लेकिन माँ का प्यार नहीं है।।
अक्सर सपने में दिख जाते,
माँ के पाँव बिंवाई वाले।
धान कूटने में पड़ जाने,
वाले वो हाथों के छाले।
फिर भी घर के काम–काज से माँ ने मानी हार नहीं है।
मिला शहर में आकर सब कुछ लेकिन माँ का प्यार नहीं है।।
हम सब होली पर रँग, खेलें,
दीवाली पर दीप जलायें।
बच्चों के सँग हंसी–खुशी से,
घर के सब त्यौहार मनायें।
पर सच पूछो तो माँ के बिन कोई भी त्यौहार नहीं है।
मिला शहर में आकर सब कुछ लेकिन माँ का प्यार नहीं है।।
बच्चों के सुख की खातिर माँ,
जाने क्या–क्या सह लेती है।
हम रहते परिवार साथ ले,
पर माँ तनहा रह लेती है।
माँ के धीरज की धरती का कोई पारावार नहीं है।
मिला शहर में आकर सब कुछ लेकिन माँ का प्यार नहीं है।।
अपने लिए नहीं जीती माँ,
सबके लिए जिया करती है।
घर को जोड़े रखने में वो,
पुल का काम किया करती है।
माँ के बिना कल्पना घर की करना सही विचार नही।

* * *

स्नेहपूर्ण स्पर्श

—शीला मिश्रा

माँ तुम्हारा स्नेहपूर्ण स्पर्श
अब भी सहलाता है मेरे माथे को
तुम्हारी करूणा से भरी आँखें
अब भी झुकती हैं मेरे चेहरे पर
जीवन की खूँटी पर
उदासी का थैला टाँगते
अब भी कानों में पड़ता है
तुम्हारा स्वर
कितना थक गई हो बेटी
और तुम्हारे निर्बल हाथों को मैं
महसूस करती हूँ अपनी पीठ पर
माँ!
क्या तुम अब सचमुच नहीं हो
नहीं
मेरी आस्था, मेरा विश्वास, मेरी आशा
सब यह कहते हैं कि माँ तुम हो
मेरी आँखो के दिपते उजास में
मेरे कंठ के माधुर्य में
चूल्हे की गुनगुनी भोर में
दरवाज़े की साँकल में
मीरा और सूर के पदों में
मानस की चौपाई में
माँ!
मेरे चारों ओर घूमती यह धरती
तुम्हारा ही तो विस्तार है।

* * *

माँ, गंगा की निर्मल धारा सी

–दीपा जोशी

जीवन–वन में स्वच्छंद सुमन–सी
अंबर चुंबी हिमश्रृंगों–सी
विधु की प्राणमयी
धारा–सी
माँ, गंगा की निर्मल
धारा–सी
स्नेहमयी धन अंबर जैसी
ममतामयी शीतल समीर–सी
विशाल हृदय अथाह
सागर सी
माँ की छवि परम
पावन–सी
भोर की प्रथम उज्जवल
किरण–सी
सघन धूप में छांव–सी
गोधूली में दीपक जैसी
माँ निशापथ में तारक–सी
भाषा में स्वर–व्यंजन जैसी
गीतों में सुर–ताल–सी
वीणा के मधुर स्वरों–सी
माँ, मुरली की तान–सी
वेदों के ज्ञान जैसी
गीता के सार–सी
गुरमुख की वाणी जैसी
माँ, मुरली की तान–सी
चिरसखी राधा जैसी
पथदृष्टा सुदर्शन–सी
देवसृष्टि की प्रतिकृति–सी
माँ; महातरू छाया–सी
बुद्ध की परिभाषा जैसी
जीवन का विश्वास–सी
धरा के धैर्य का
प्रतिरूप–सी
माँ सर्वज्ञ ज्ञाता–सी
हृदय में स्पंदन जैसी
श्वास–निश्वास की बंधन
रोम–रोम में रुधिर सरीखी
माँ परम कल्याणी–सी
देवालय की अनुपम मूरत–सी
गिरजाघर की सुखद शांति–सी
पारस–सी शक्तिधारिणी
माँ तुम ही परमेश्वर हो
माँ तुम ही परमेश्वर हो।

* * *

अनाथ की माँ

–शिवकुमार 'बिलग्रामी'

अनाथ की माँ
एक सपना होती है
और उस सपने में माँ,
.... हमेशा रोती है

जब भी उसका लाल
भूखा, प्यासा, बेहाल
सड़क पर भटकता है
या फुटपाथ पर सोता है
सपने वाली माँ का
बुरा हाल होता है

सर्दियों की रात में
सिकुड़कर गठरी बने
अपने लाल के बालों में
उंगलियाँ फँसाकर
माँ उसे सहलाती है
'माँ रोज–रोज सपनों में आती है'

इंसानियत के दुश्मन
जब भी उसके लाल को
बात–बेबात सताते हैं
अपने स्वार्थ के लिए
कभी उठाईगीर
तो कभी चोर बताते हैं
और अनियंत्रित हो
लात–घूंसा बरसाते हैं
तब अक्सर सपनों वाली माँ
अपने बेहोश लाल के पास आती है
हाथ का सहारा दे
उसको उठाती है
'चोटों को सहलाती है'

माँ की मखमली
जादुई उँगलियों के स्पर्श से
अनाथ ज्यों–ज्यों सुकून पाता है
उसके दिल में
यह ख्याल आता है
कि यदि माँ.....
सपनों में भी न आती
तब तो मेरी–
दुनिया ही उजड़ जाती....
दुनिया ही उजड़ जाती....
दुनिया ही उजड़ जाती....

* * *

मंदिर के सब जीने कैसे चढ़ती होगी माँ

—तहसीन मुनव्वर

हँसती होगी, रोती होगी, हँसती होगी माँ
रात को घर के किस कमरे में जलती होगी माँ?

बाप का मरना मेरे लिए जब इतना भारी है
उसके बिना तो रोज ही जीती–मरती होगी माँ!

बाबूजी घोड़ी पर चढ़कर घर आते होंगे
अपनी याद में दुल्हन जैसी सजती होगी माँ

पानी का नलका खोला तो आँसू बह निकले
गहरे कुएं से पानी कैसे भरती होगी माँ?

मेरी खातिर अब भी चाँद बनाती होगी ना
जब भी तवे पर घर की रोटी पकाती होगी माँ

अपनी आँख का नूर तो वह बस मुझको कहती थी
मेरी भेजी चिट्ठी कैसे पढ़ती होगी माँ?

मेरी लम्बी उम्र की अर्ज़ी होठों पर लेकर
मंदिर के सब ज़ीने कैसे चढ़ती होगी माँ?

* * *

माँ की मोहब्बत

—इमरान 'प्रतापगढ़ी'

शेर

तेरी हर बात चलकर
यूं भी मेरे जी से आती है,
कि जैसे याद की खुशबू
किसी हिचकी से आती है,
मुझे आती है तेरे बदन से
ऐ माँ वही खुशबू,
जो एक पूजा के दीपक में
पिघलते घी से आती है।

गीत

खुदा मुझसे माँ की मोहब्बत न छीने
अगर छीनना है जहाँ छीन ले वो
जमीं छीन ले आसमाँ छीन ले वो
मेरे सर की बस एक ये छत ले वो
खुदा मुझसे माँ की मोहब्बत न छीने

अगर माँ न होती ज़मीं पर न आता
जो आँचल न होता कहाँ सर छुपाता
'मेरा लाल' कहकर बुलाती है मुझको
कि खुद भूखी रहकर खिलाती है मुझको
कि होठों की मेरी हँसी छीन ले वो
कि गम दे दे हर एक खुशी छीन ले वो
यही एक बस मुझसे दौलत न छीने
खुदा मुझसे माँ की मोहब्बत न छीने

मुझे पाला–पोसा बड़ा कर दिया है,
कि पैरों पे अपने खड़ा कर दिया है

कभी जब अंधेरों ने मुझको सताया
तो माँ की दुआ ने ही रस्ता दिखाया
ये दामन मेरा चाहे नम कर दे जितना
वो बस आज मुझ पर करम कर दे इतना
जो मुझपे किया है इनायत न छीने
खुदा मुझसे माँ की मोहब्बत न छीने

अगर माँ का सर पर नहीं हाथ होगा
तो फिर कौन है जो मेरे साथ होगा
कहाँ मुँह छिपाकर के रोया करूँगा
तो फिर किसकी गोदी में सोया करूँगा
मेरे सामने माँ की जाँ छीनकर के
मेरी खुशनुमा दास्तां छीनकर के
मेरा जोश और मेरी हिम्मत न छीने
खुदा मुझसे माँ की मोहब्बत न छीने।

* * *

तमाम घर की फ़ज़ा को बदलता रहता है,
वो एक खिलौना जो आँगन में चलता रहता है
अज़हर इनायती

माँ कभी खतम नहीं होती!

–रंजना (रंजू) भाटिया

माँ लफ़्ज जिंदगी की
वो अनमोल लफ़्ज है
जिसके बिना ज़िंदगी
ज़िंदगी नहीं कही जा सकती

मेरा बचपन थककर सो गया
माँ तेरी लोरियों के बगैर
एक जीवन अधूरा–सा रह गया
माँ तेरी बातों के बगैर

तेरी आँखों में मैंने देखे थे
अपने लिए सपने कई
वो सपना कहीं टूटकर
बिखर गया माँ तेरे बगैर

आज तू बहुत दूर है मुझसे
पर दिल के बहुत पास है
तुम्हारी यादों की वह अमूल्य धरोहर
आज भी मेरे साथ है
जिंदगी की हर जंग को
जीतने के लिए
अपने सर पर मुझे महसूस होता
आज भी तेरा हाथ है।

कैसे भूल सकती हूँ माँ
मैं आपके हाथों का स्नेह
जिन्होंने डाला था मेरे मुँह में
पहला निवाला
लेकर मेरा हाथ अपने हाथों में
दुनिया की राहों में
मेरा पहला कदम था जो डाला
जाने–अनजाने माफ किया था
मेरी हर गलती को
हर शरारत को
हँसकर भुलाया था
दुनिया हो जाए
कितनी पराई
पर तुमने मुझे
कभी नहीं किया पराया था
दिल जब भी भटका
जीवन के सहरा में
तेरे प्यार ने ही
नई राह को दिखाया था

जिंदगी जब भी
उछसा होकर तन्हा हो आई
माँ तेरे आँचल ने ही
मुझे अपने में छिपाया था

आज नहीं हो तुम
जिस्म के साथ मेरे
पर अपनी बातों से
अपनी अमूल्य यादों से
तुम हर पल
आज भी मेरे साथ हो.....
क्योंकि माँ
कभी खत्म नहीं होती
तुम तो आज भी
हर पल मेरे ही पास हो
माँ हर पल
तुम साथ हो मेरे
मुझको यह एहसास है।

* * *

माँः एक दास्ताँ

–डॉ. सुनील जोगी

जब आँख खुली तो अम्मा की,
गोदी का एक सहारा था।
उसका नन्हा आँचल मुझको ,
भूमण्डल से प्यारा था।।

उसके चेहरे की झलक देख,
चेहरा फूलों–सा खिलता था।
उसके स्तन की एक बूँद से,
मुझको जीवन मिलता था।।

हाथों से बालों को नोंचा,
पैरों से खूब प्रहार किया।
फिर भी उस माँ ने पुचकारा,
हमको जी भर के प्यार किया।।

मैं उसका राजा बेटा था,
वो आँख का तारा कहती थी।
मैं बनूं बुढ़ापे पे उसका,
बस एक सहारा कहती थी।।

उंगली को पकड़ चलाया था,
पढ़ने विद्यालय भेजा था।
मेरी नादानी को भी निज,
अन्तर में सदा सहेजा था।।

मेरे सारे प्रश्नों का वो,
फौरन जवाब बन जाती थी।
मेरी राहों के कांटे चुन वो
खुद गुलाब बन जाती थी।।

मैं बड़ा हुआ तो कॉलिज से,
इक रोग प्यार का ले आया।
जिस दिल में माँ की मूरत थी,
वो रामकली को दे आया।।

शादी की; पति से बाप बना,
अपने रिश्तों में झूल गया।
अब करवाचौथ मनाता हूँ,
माँ की ममता को भूल गया।।

हम भूल गये उसकी ममता,
मेरे जीवन की थाती थी।
हम भूल गये अपना जीवन,
वो अमृत वाली छाती थी।।

हम भूल गये वो खुद भूखी,
रहकर हमें खिलाती थी।
हमको सूखा बिस्तर देकर,
खुद गीले में सो जाती थी।।

हम भूल गये उसने ही,
होठों को भाषा सिखलायी थी।
मेरी नीदों के लिए रात भर,
उसने लोरी गायी थी।

हम भूल गये हर गलती पर,
उसने डांटा–समझाया था।
बच जाऊं, बुरी नज़र से,
काला टीका सदा लगाया था।।

.....जारी

.....जारी

हम बड़े हुए तो ममता वाले,
सारे बंधन तोड़ आए।
बंगले में कुत्ते पाल लिए,
माँ को वृद्धाश्रम छोड़ आए।

उसने सपनों का महल गिराकर,
कंकड़–कंकड़ बीन लिए।
खुदगर्ज़ी में उसके सुहाग के
आभूषण तक छीन लिए।।

हम माँ को घर के बँटवारे की,
अभिलाषा तक ले आए।
उसको पावन मंदिर से,
गाली की भाषा तक ले आए।।

माँ की ममता को देख मौत भी,
आगे से हट जाती है।
गर माँ अपमानित होती
धरती की छाती फट जाती है।।

घर को पूरा जीवन देकर,
बेचारी माँ क्या पाती है?
रूखा–सूखा खा लेती है,
पानी पीकर सो जाती है।।

जो माँ जैसी देवी घर के,
मंदिर में नहीं रख सकते हैं।
वो लाखो पुण्य भले कर लें,
इन्सान नहीं बन सकते हैं।।

माँ जिसको भी जल दे दे वो,
पौधा संदल बन जाता है।
माँ के चरणों को छूकर पानी,
गंगाजल बन जाता है।।

माँ के आँचल ने युगों–युगों से,
भगवानों को पाला है।
माँ के चरणों में जन्नत है,
गिरजाघर और शिवाला है।।

हिमगिरि जैसी ऊँचाई है,
सागर जैसी गहराई है।
दुनिया में जितनी खुशबू है,
माँ के आँचल से आई है।।

माँ कबिरा की साखी जैसी,
माँ तुलसी की चौपाई है।
मीराबाई की पदावली,
खुसरों की अमर रुबाई है।।

माँ आँगन की तुलसी जैसी,
पावन बरगद की छाया है।
माँ वेद–ऋचाओं की गरिमा,
माँ महाकाव्य की काया है।

माँ मानसरोवर ममता का,
माँ गोमुख की ऊँचाई है।
माँ परिवारों की संगम है,
माँ रिश्तों की गहराई है।।

.....जारी

.....जारी

माँ हरी दूब है धरती की,
माँ केसर वाली क्यारी है।
माँ की उपमा केवल माँ है,
माँ हर घर की फुलवारी है।।

माँ, सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा,
अनुसूया, मरियम, सीता है।
माँ पावनता में रामचरित,
मानस है, भगवतगीता है।।

सातों सुर नर्तन करते जब,
कोई माँ लोरी गाती है।
माँ जिस रोटी को छू लेती है,
वो प्रसाद बन जाती है।।

अम्मा तेरी हर बात मुझे,
वरदान से बढ़कर लगती है।
हे माँ! तेरी सूरत मुझकों,
भगवान से बढ़कर लगती है।।

माँ हँसती है तो धरती का,
ज़र्रा–जर्रा मुस्काता है।
देखो तो दूर क्षितिज, अंबर,
धरती को शीश झुकाता है।

सारे तीरथ के पुण्य जहाँ,
मैं उन चरणों में लेटा हूँ।
जिनके कोई संतान नहीं,
मैं उन माँओं का बेटा हूँ।।

माना मेरे घर की दीवारों में,
चंदा–सी मूरत है।
पर मेरे मन के मंदिर में,
बस केवल माँ की मूरत है।

हर घर में माँ की पूजा हो,
ऐसा संकल्प उठाता हूँ।
मैं दुनिया की हर माँ के,
चरणों में ये शीश झुकाता हूँ।।

* * *

निवेदन

पारस–परस पूरी तरह से एक गैर–व्यावसायिक पत्रिका है । इसका एकमात्र उद्देश्य काव्य के माध्यम से हिन्दी कवियों के पैगाम को जन–जन तक पहुंचाना है । इस पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाओं के साथ रचनाकारों का नाम और उनसे संबंधित उचित जानकारी दी जाती है जिससे रचनाकार को उचित श्रेय मिलता है । इतना ही नहीं, हम प्रत्येक रचना के प्रकाशन से पूर्व संबद्ध रचनाकार से लिखित/मौखिक अनुमति का भी भरसक प्रयास करते हैं । फिर भी यदि किसी रचनाकार/कॉपीराइट धारक को कोई आपत्ति है तो उनसे अनुरोध है कि वह हिन्दी काव्य के प्रचार–प्रसार को ध्यान में रखते हुए, इस पत्रिका के योगदानकर्त्ताओं से हुई भूलवश गलती को क्षमा कर दें। यदि कॉपीराइटधारक को कोई आपत्ति है तो कृपया paarasparas.pathak@gmail.com पर सूचित कर दें ताकि पत्रिका के आगामी अंकों में उनकी रचनाएं प्रकाशित करने से पूर्व लिखित अनुमति सुनिश्चित की जा सके और इस संबंध में आवश्यक पहलुओं को ध्यान में रखा जा सके ।

इस कार्य को प्रसून–प्रतिष्ठान द्वारा जन–जागरुकता और जनहित की दृष्टि से किया जा रहा है । पत्रिका को शुभेच्छुओं तथा प्रसून–प्रतिष्ठान के सदस्यों में निःशुल्क वितरित किया जाता है ।

माँ बिन सृष्टि कहाँ चलती है?

–इंदुमती मिश्रा 'किरण'

माँ, तुम केवल माँ हो
तुम बिन ममत्व कहाँ मिलता है?
तुम बिन प्यार कहाँ पलता है?
तुम बिन जीवन, कोरा सपना
तुम बिन कोई नहीं है अपना
तुम ही श्रद्धा, तुम ही ममता

तुम ही अमृत, तुम हा गंगा
तुम ही देवी, तुम ही दुर्गा
तुम बिन श्वास कहाँ चलती है?
हम हँसते तो, माँ हँसती है।
हम रोते तो, माँ रोती है
अश्रु प्रवाहों में भी माँ है।
सुख के पलों में भी माँ है
स्वर्ग–सुखों–सा स्नेह तुम्हारा
तुम बिन सृष्टि कहाँ चलती है?
माँ तू ही है पालनकर्त्री
तू ही दुःखों की आँच है सहती
दुःख तूने आँचल में समेटे
सुख तूने बच्चों में बाँटे
अविचल, पावन प्यार तुम्हारा
तुम बिन सिद्धि कहाँ मिलती है?

* * *

नाखूनों से मत खुरचो तुम, अक्षर इन दीवालों के
ये सब मिलकर खोज रहे हैं, उत्तर चंद सवालों के

तेजनारायण शर्मा 'बेचैन'

माँ है बच्चों की जान

—रीटा भल्ला

माँ भी क्या है बच्चों की जान,
इसके बिना मानो दुनिया सुनसान।
इसके आँचल की छाया,
कहते हैं अनमोल माँ का साया।
सदैव रहे तत्पर जान लुटाने को,
सब दुःख–दर्द दूर मिटाने को।
न्यारी है इसकी स्वार्थहीनता,
जिसमें तनिक भी नहीं मलिनता।
बच्चों के सब दर्द हरने को,
सदैव रहे तत्पर मरने को।
माँ की दुआएं खाली न जाएँ,
केवल भाग्यशाली ही इन्हें ले पाएँ।
दुआएं लुटाती भर–भर हाथ,
जिन तक रहे माँ का साथ।

* * *

दिल में किसी के राह किये जा रहा हूँ मैं
कितना हंसी गुनाह किये जा रहा हूँ मैं
यूं जिन्दगी गुजार रहा हूँ तेरे बगैर
जैसे कोई गुनाह किये जा रहा हूँ मैं

जिगर मुरादाबादी

माँ

—पं0 ओम व्यास 'ओम'

माँ, माँ—माँ संवेदना है, भावना है एहसास है,
माँ, माँ जीवन के फूलों में खुशबू का वास है।

माँ, माँ रोते हुए बच्चे का खुशनुमा पलना है,
माँ, माँ मरुस्थल में नदी या मीठा—झरना है।

माँ, माँ लोरी है, गीत है, प्यारी—सी थाप है,
माँ, माँ पूजा की थाली है, मंत्रों का जाप है।

माँ, माँ आँखों का सिसकता हुआ किनारा है,
माँ, माँ गालों पर पप्पी है, ममता की धारा है।

माँ, माँ झुलसते दिलों में कोयल की बोली है,
माँ, माँ मेंहदी है, कुमकुम है, सिंदूर है, रोली है।

माँ, माँ कलम है, दवात है, स्याही है,
माँ, माँ परमात्मा की स्वयं एक गवाही है।

माँ, माँ त्याग है, तपस्या है, सेवा है,
माँ, माँ फूंक से ठंडा किया हुआ कलेवा है।

माँ, माँ अनुष्ठान है, साधना है, जीवन का हवन है,
माँ, माँ ज़िंदगी के मोहल्ले में आत्मा का भवन है।

माँ, माँ चूड़ी वाले हाथों को मजबूत धौल का नाम है,
माँ, माँ काशी है, काबा है, और चारों धाम है।

माँ, माँ चिंता है, याद है, हिचकी है,
माँ माँ बच्चे की चोट पर सिसकी है।

.....जारी

माँ, माँ चूल्हा–धुंआ–रोटी और हाथों का छाला है,
माँ, माँ ज़िदगी की कड़वाहट में अमृत का प्याला है।

माँ, माँ पृथ्वी है, जगत है, धुरी है,
माँ बिना इस सृष्टि की कल्पना अधूरी है।

तो माँ की ये कथा अनादि है,
ये अध्याय नहीं है...
.... और माँ का जीवन में कोई पर्याय नहीं है।

तो माँ का महत्त्व दुनिया में कम हो नहीं सकता,
और माँ जैसा दुनिया में कुछ हो नहीं सकता।

और माँ जैसा दुनिया में कुछ हो नहीं सकता,
तो मैं कला की ये पंक्तियाँ माँ के नाम करता हूँ,
और दुनिया की सभी माताओं को प्रणाम करता हूँ।

* * *

जब तू हुई उदास लगी यह दुनिया मुझे पराई–सी
जब मुस्काई घर आँगन में बजी मधुर शहनाई–सी
कभी कबीरा की साखी थी और कभी मीरा की धुन
माँ, सचमुच मुझको लगती है तुलसी की चौपाई–सी

महेन्द्र शर्मा

गजानन माधव मुक्तिबोध

(जन्म: 13 नवम्बर, 1917; निधन: 11 सितंबर, 1964)

भीतर जो शून्य है
उसका एक जबड़ा है,
जबड़े में मांस काट खाने के दाँत हैं
उनको खा जायेंगे
तुमको खा जायेंगे

रघुवीर सहाय

(जन्म: 9 दिसम्बर, 1929; निधन: 30 दिसम्बर, 1990)

कितने अकेले तुम रह सकते हो
अपने जैसे कितनों को खोज सकते हो तुम
हम एक गरीब देश में रहने वाले हैं इसलिए
हमारी मुटभेड़ हर वक्त रहती है ताकत से
देश के गरीब रहने का मतलब है
अकड़ और अश्लीलता का हम पर हर वक्त हमला